वी.एस. पालनिचामी चेट्टियार फर्म

बनाम

सी. अलगप्पन तथा एक अन्य

3 फरवरी, 1999

[एस. सगीर अहमद तथा डी.पी. वाधवा, न्यायमूर्तिगण]

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम—धारा 16, 28—समय के विस्तार हेतु आवेदन— विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद—डिक्रीधारक द्वारा न्यायालय द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर क्रय धनराशि जमा करने में विफलता—शेष राशि जमा नहीं किए जाने के कारण निष्पादन निरस्त किया गया—डिक्री के पाँच वर्ष पश्चात समय के विस्तार हेतु आवेदन दाखिल किया गया—पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय के समक्ष—निष्पादन न्यायालय को प्रतिप्रेषित किया गया—क्या पोषणीय है—अभिनिर्धारित किया गया, निष्पादन न्यायालय समय के विस्तार हेतु आवेदन का विचार कर सकता है—आगे अभिनिर्धारित किया गया, विक्रेता प्रतिरक्षा के रूप में विखंडन की माँग कर सकता है।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम—धारा 28—विशिष्ट अनुतोष हेतु वाद डिक्री किया गया—डिक्रीधारक द्वारा शेष प्रतिफल राशि जमा करने में विफलता—विलंब के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं—अभिनिर्धारित किया गया, विवेकाधिकार का प्रयोग डिक्रीधारक के पक्ष में नहीं किया जाए—समय का कोई विस्तार प्रदान नहीं किया जाए।

परिसीमा अधिनियम—अनुच्छेद 54—विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद परिसीमा के भीतर दाखिल किया गया—वाद डिक्री किया गया—शेष प्रतिफल राशि जमा नहीं की गई—अभिनिर्धारित किया गया, केवल इस कारण कि वाद परिसीमा के भीतर दाखिल किया गया है, डिक्रीधारक संविदा का पालन करने के लिए अपनी तत्परता तथा इच्छा का प्रदर्शन करने से विमुक्त नहीं हो जाता है।

विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद में उत्तरदाताओं, जो डिक्रीधारक थे, ने डिक्री प्राप्त करने के पाँच वर्ष पश्चात तथा अपील के निरस्त किए जाने के 3 वर्ष पश्चात निष्पादन आवेदन दाखिल किए। निष्पादन आवेदन इस आधार पर निरस्त कर दिए गए कि एक वाद में उत्तरदाता ने विनिर्दिष्ट समय के भीतर शेष राशि जमा नहीं की थी तथा दूसरे में कोई राशि जमा नहीं की थी। जबकि पुनरीक्षण याचिकाएँ उच्च न्यायालय में लंबित थीं, उत्तरदाताओं ने राशि जमा करने हेतु समय के विस्तार की माँग करते हुए विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 28 के अधीन पृथक आवेदन अधिमान्य किए। अपीलकर्ता ने यह तर्क करते हुए उनका विरोध किया कि आवेदन उच्च न्यायालय में पोषणीय नहीं है तथा विचारण न्यायालय में ऐसा कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया था। उच्च न्यायालय ने निष्पादन न्यायालय को आवेदनों का निपटारा करने का निदेश देते हुए विषय को प्रतिप्रेषित कर दिया तथा यह भी अभिनिर्धारित किया कि विचारण न्यायालय को समय का विस्तार करने की शक्ति प्राप्त है।

इस न्यायालय के समक्ष अपील में, उत्तरदाता ने यह तर्क किया कि इस न्यायालय को उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि विषय केवल निष्पादन न्यायालय को इस आशय से प्रतिप्रेषित किया गया है कि वह डिक्री के उपबंधों के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि जमा करने हेतु समय के विस्तार के आवेदनों का विधि के अनुसार निष्पादन करे।

अपीलों को अनुज्ञात करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1. जब विचारण न्यायालय तथा निष्पादन न्यायालय एक ही हों, तब निष्पादन न्यायालय समय के विस्तार हेतु आवेदन का विचार कर सकता है, यद्यपि आवेदन को मुख्य वाद में दाखिल आवेदन के रूप में माना जाना है। इसी तर्क के आधार पर, विक्रेता-डिक्रीधारक भी विक्रय संविदा के विखंडन की माँग कर सकता है अथवा डिक्री के निष्पादन को वर्जित करने हेतु प्रतिरक्षा में यह अभिवाक् ग्रहण कर सकता है। [353-ई-एफ]

मुख्तारनामा धारक मनजीत सिंह के माध्यम से सरदार मोहर सिंह बनाम मंगीला उर्फ मंगट्या, **(1997) 2 एम.एल.जे. 88 एस.सी. = [1997] 9 एस.सी.सी. 217, उद्धृत**।

के. कल्पना सरस्वती बनाम पी.एस.एस. सोमसुंदरम चेट्टियार, **ए.आई.आर. (1980) एस.सी. 512**; *के.एस. विद्यनादम तथा अन्य बनाम वैरावन,* **[1997] 3 एस.सी.सी. 1**; *चंद रानी बनाम कमल रानी,* **[1993] 2 एस.सी.सी. 519**; *एन.पी. थिरुग्नानम (मृत) विधिक प्रतिनिधियों द्वारा बनाम डॉ. आर. जगन मोहन राव तथा अन्य,* **[1995] 5 एस.सी.सी. 115** तथा *रामनकुट्टी गुप्तन बनाम अवरा,* **[1994] 2 एस.सी.सी. 642**, का उल्लेख किया गया।

2. केवल इस कारण कि कोई वाद परिसीमा की विहित अवधि के भीतर दाखिल किया गया है, इससे क्रेता-वादी इस बात का प्रदर्शन करने से विमुक्त नहीं हो जाता कि क्या वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए तत्पर तथा इच्छुक था और यदि पालन नहीं हुआ था, तो क्या वह विक्रेता द्वारा उत्पन्न किसी बाधा के कारण था अथवा अन्यथा। किसी करार के विशिष्ट निष्पादन को प्रदान करने संबंधी उपबंध अत्यंत कठोर हैं। साम्यिक विचारणाएँ लागू होती हैं। न्यायालय को सभी आनुषंगिक परिस्थितियों पर विचार करना होता है, जिसमें यह भी सम्मिलित है कि क्या क्रेता ने विक्रय संविदा के अधीन स्वयं को युक्तियुक्त रीति से संचालित किया है। [359-डी-ई]

3. यह उत्तरदाता-डिक्रीधारक का वाद नहीं है कि विक्रेता-निर्णयऋणी की ओर से किसी त्रुटि के कारण डिक्री के अनुसार राशि जमा नहीं की जा सकी। स्थिति ऐसी होने पर, यदि अब समय प्रदान किया जाता है, तो वह करार के विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दाखिल किए जाने के लिए विहित परिसीमा-अवधि से परे चला जाएगा, यद्यपि यह उपबंध कठोर रूप से लागू नहीं भी हो सकता है। तथापि, यह न्यायालय द्वारा विचार किए जाने योग्य एक महत्वपूर्ण परिस्थिति है। इसके अतिरिक्त, डिक्रीधारक-उत्तरदाताओं की ओर से इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि उन्होंने डिक्री के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि का

भुगतान क्यों नहीं किया, सिवाय इसके कि स्वयं उच्च न्यायालय ने जो टिप्पणी करना उपयुक्त समझा, जो निश्चित रूप से अभिलेख से समर्थित नहीं है। साम्या की अपेक्षा है कि विवेकाधिकार का प्रयोग डिक्रीधारक-उत्तरदाताओं के पक्ष में न किया जाए तथा डिक्री का अनुपालन करने हेतु उन्हें समय का कोई विस्तार प्रदान न किया जाए। [359-जी-एच; 360-ए]

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार : 1999 की दीवानी अपील सं. 502-503

1995 की सी.आर.पी. सं. 2097 में मद्रास उच्च न्यायालय के दिनांक 24.12.97 के निर्णय तथा आदेश से।

आर. सुंदरा वरदन तथा टी.वी. रत्नम, अपीलकर्ता की ओर से।

के.के. मणि, उत्तरदाताओं की ओर से।

न्यायालय का निर्णय निम्नांकित द्वारा प्रदत्त किया गया :

न्यायमूर्ति डी.पी. वाधवा अनुमति प्रदान की गई।

ये निर्णयऋणी की दो अपीलें हैं, जो मद्रास उच्च न्यायालय के दिनांक 24 दिसंबर, 1997 के सामान्य निर्णय के विरुद्ध हैं, जो उत्तरदाता-डिक्रीधारकों द्वारा दाखिल निष्पादन आवेदनों को निरस्त करने वाले निष्पादन न्यायालय के आदेश के पुनरीक्षण में पारित किया गया था। डिक्रियाँ कुछ अचल संपत्तियों के विक्रय के दो करारों के विशिष्ट निष्पादन के लिए हैं।

अपीलकर्ता ने, दो भूखंडों, जिनमें से प्रत्येक का माप 60' x 40' था, के स्वामी के रूप में, उत्तरदाता-डिक्रीधारकों के साथ 16 फरवरी, 1980 के दो पृथक किन्तु समान विक्रय करार निष्पादित किए। चूँकि निर्णयऋणी करारों के अपने भाग का पालन करने में विफल रहा, डिक्रीधारकों ने पुडुकोट्टई के जिला मुंसिफ न्यायालय में विक्रय संविदा के विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दाखिल किए। वाद उत्तरदाताओं के पक्ष में इस निदेश के साथ डिक्री किए गए कि वे प्रतिफल की शेष राशि जमा करें तथा अपीलकर्ता को विक्रय विलेख निष्पादित

करने का अतिरिक्त निदेश दिया गया। वादों की डिक्री 31 जनवरी, 1983 को की गई और प्रतिफल की शेष राशि 31 मार्च, 1983 को अथवा उससे पूर्व जमा की जानी थी। वादों को डिक्री करने वाले निर्णय तथा आदेश के विरुद्ध अपीलकर्ता ने उच्च न्यायालय में अपीलें दाखिल कीं, जिन्हें 28 फरवरी, 1985 को निरस्त कर दिया गया। उच्च न्यायालय ने निर्णयऋणी की अपीलों को निरस्त करते समय उत्तरदाताओं को प्रतिफल की शेष राशि जमा करने हेतु समय का कोई विस्तार प्रदान नहीं किया।

उत्तरदाता-डिक्रीधारकों ने विचारण न्यायालय द्वारा डिक्रियाँ पारित किए जाने के पाँच वर्ष पश्चात तथा उच्च न्यायालय द्वारा अपीलें निरस्त किए जाने के तीन वर्ष पश्चात संविदा के विशिष्ट निष्पादन की डिक्रियों के निष्पादन हेतु आवेदन दाखिल किए। अपीलकर्ता-निर्णयऋणी द्वारा ग्रहण किए गए अभिवाकों में से एक यह था कि उत्तरदाता-डिक्रीधारक डिक्रियों के उपबंधों के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि जमा करने में विफल रहे थे। एक वाद में प्रतिफल की शेष राशि डिक्री में प्रदान की गई अवधि के बहुत पश्चात जमा की गई थी तथा दूसरे वाद में प्रतिफल की शेष राशि का कोई भाग ही जमा नहीं किया गया था।

निष्पादन न्यायालय ने 2 सितंबर, 1984 के आदेश द्वारा उत्तरदाता-डिक्रीधारकों के निष्पादन आवेदनों को यह अभिनिर्धारित करते हुए निरस्त कर दिया कि उन्होंने डिक्रियों के अधीन विनिर्दिष्ट समय के भीतर प्रतिफल की शेष राशि का भुगतान नहीं किया था।

इस आदेश के विरुद्ध उत्तरदाता-डिक्रीधारकों द्वारा उच्च न्यायालय में दो पुनरीक्षण दाखिल किए गए। यह विवादित नहीं था कि डिक्रियों के उपबंधों, जो सशर्त थे, के अनुपालन में विलंब हुआ था। उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही के दौरान उत्तरदाता-डिक्रीधारकों ने राशि जमा करने हेतु विचारण न्यायालय द्वारा डिक्रियों के अधीन प्रदान किए गए समय के विस्तार की माँग करते हुए पृथक आवेदन दाखिल किए। जब अपीलकर्ता-निर्णयऋणी ने इस आधार पर आवेदन दाखिल किए जाने पर आपत्ति की कि वे उच्च न्यायालय में पोषणीय नहीं हैं तथा विचारण न्यायालय में ऐसा कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया था, तब उच्च

न्यायालय ने विषय को निष्पादन न्यायालय को इस निदेश के साथ प्रतिप्रेषित कर दिया कि वह आवेदनों को निष्पादन कार्यवाही में अंतर्वर्ती आवेदनों के रूप में माने तथा उनका विधि के अनुसार निष्पादन करे। साथ ही, उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि इस न्यायालय के सरदार मोहर सिंह, *मुख्तारनामा धारक मनजीत सिंह के माध्यम से बनाम मंगियाल उर्फ मंगट्या,* (1997) 2 एम.एल.जे. 88 एस.सी. = [1997] 9 एस.सी.सी. 217 में निर्णय के दृष्टिगत, "अधीनस्थ न्यायालयों को समय का विस्तार करने की शक्ति प्राप्त है।"

व्यथित होकर, अपीलकर्ता-निर्णयऋणी ने ये अपीलें दाखिल कीं।

विशिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 16 के अधीन कुछ ऐसे आधार हैं जो संविदा के विशिष्ट निष्पादन के अनुतोष को वर्जित करते हैं। यह धारा, जहाँ तक प्रासंगिक है, निम्नवत् है :—

> *"16. अनुतोष के लिए वैयक्तिक वर्जनाएँ।*—किसी संविदा का विशिष्ट निष्पादन निम्नलिखित व्यक्ति के पक्ष में प्रवर्तित नहीं किया जा सकता है—
>
> (ए) ....
>
> (बी) ....
>
> (सी) जो यह अभिकथन करने तथा सिद्ध करने में विफल रहता है कि उसने संविदा के उन तात्विक उपबंधों का, जिनका पालन उसके द्वारा किया जाना है, पालन किया है अथवा वह सदैव उनका पालन करने के लिए तत्पर तथा इच्छुक रहा है, उन उपबंधों से भिन्न जिनका पालन प्रतिवादी द्वारा निवारित किया गया है अथवा जिनका परित्याग कर दिया गया है।
>
> स्पष्टीकरण—खंड (सी) के प्रयोजनों के लिए,—
>
> (i) जहाँ किसी संविदा में धनराशि का भुगतान सम्मिलित है, वहाँ वादी के लिए वास्तव में प्रतिवादी को कोई धनराशि निवेदित करना अथवा न्यायालय में

कोई धनराशि जमा करना आवश्यक नहीं है, सिवाय उस स्थिति के जब न्यायालय द्वारा ऐसा निदेश दिया गया हो;

(ii) वादी को संविदा का उसके वास्तविक निर्वचन के अनुसार पालन किए जाने का, अथवा उसका पालन करने के लिए तत्परता तथा इच्छा का, अभिकथन करना होगा।"

अधिनियम की धारा 28 के अधीन, अचल संपत्ति के विक्रय के लिए संविदा के विशिष्ट निष्पादन की डिक्री पारित किए जाने के पश्चात, यदि क्रेता-डिक्रीधारक डिक्री द्वारा अनुज्ञात अवधि के भीतर अथवा ऐसी अतिरिक्त अवधि के भीतर, जिसे न्यायालय अनुज्ञात करे, उस क्रय धनराशि का भुगतान नहीं करता है जिसका भुगतान करने का न्यायालय ने उसे आदेश दिया है, तो विक्रेता-निर्णयऋणी उसी वाद में, जिसमें डिक्री पारित की गई है, संविदा का विखंडन कराए जाने हेतु आवेदन कर सकता है। अधिनियम की धारा 28 निम्नवत् है :—

"28. अचल संपत्ति के विक्रय अथवा पट्टे के लिए संविदाओं का, जिनका विशिष्ट निष्पादन डिक्री किया जा चुका है, कुछ परिस्थितियों में विखंडन।—(1) जहाँ किसी वाद में अचल संपत्ति के विक्रय अथवा पट्टे के लिए किसी संविदा के विशिष्ट निष्पादन की डिक्री पारित की गई है और क्रेता अथवा पट्टेदार डिक्री द्वारा अनुज्ञात अवधि के भीतर अथवा ऐसी अतिरिक्त अवधि के भीतर, जिसे न्यायालय अनुज्ञात करे, उस क्रय धनराशि अथवा अन्य राशि का भुगतान नहीं करता है, जिसका भुगतान करने का न्यायालय ने उसे आदेश दिया है, वहाँ विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता उसी वाद में, जिसमें डिक्री पारित की गई है, संविदा का विखंडन कराए जाने हेतु आवेदन कर सकता है और ऐसे आवेदन पर न्यायालय, आदेश द्वारा, वाद के न्याय की अपेक्षा के अनुसार, संविदा का विखंडन या तो व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार के संबंध में अथवा पूर्णतः कर सकता है।

(2) जहाँ उपधारा (1) के अधीन किसी संविदा का विखंडन किया जाता है, वहाँ न्यायालय—

(ए) क्रेता अथवा पट्टेदार को, यदि उसने संविदा के अधीन संपत्ति का कब्जा प्राप्त कर लिया है, ऐसे कब्जे को विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता को पुनः प्रदान करने का निदेश देगा, तथा

(बी) विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता को उन सभी किरायों तथा लाभों का भुगतान करने का निदेश दे सकता है, जो संपत्ति के संबंध में उस तिथि से, जिस तिथि को ऐसा कब्जा क्रेता अथवा पट्टेदार द्वारा प्राप्त किया गया था, विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता को कब्जे की पुनर्स्थापना तक उपार्जित हुए हैं, तथा यदि वाद का न्याय ऐसी अपेक्षा करता है, तो संविदा के संबंध में बयाना धनराशि अथवा निक्षेप के रूप में क्रेता अथवा पट्टेदार द्वारा भुगतान की गई किसी राशि की वापसी का भी निदेश दे सकता है।

(3) यदि क्रेता अथवा पट्टेदार उस क्रय धनराशि अथवा अन्य राशि का, जिसका भुगतान करने का उसे डिक्री के अधीन आदेश दिया गया है, उपधारा (1) में निर्दिष्ट अवधि के भीतर भुगतान कर देता है, तो न्यायालय, उसी वाद में किए गए आवेदन पर, क्रेता अथवा पट्टेदार को ऐसा अतिरिक्त अनुतोष प्रदान कर सकता है, जिसका वह हकदार हो, जिसमें उपयुक्त वादों में निम्नलिखित सभी अथवा इनमें से कोई अनुतोष सम्मिलित है, अर्थात्—

(ए) विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता द्वारा उचित हस्तांतरण-पत्र अथवा पट्टा का निष्पादन;

(बी) ऐसे हस्तांतरण-पत्र अथवा पट्टा के निष्पादन पर संपत्ति का कब्जा अथवा विभाजन तथा पृथक कब्जा प्रदान किया जाना।

(4) इस धारा के अधीन दावा किए जा सकने वाले किसी अनुतोष के संबंध में कोई पृथक वाद, यथास्थिति, विक्रेता, क्रेता, पट्टाकर्ता अथवा पट्टेदार के कहने पर पोषणीय नहीं होगा।

(5) इस धारा के अधीन किसी कार्यवाही का व्यय न्यायालय के विवेकाधिकार में होगा।"

वर्तमान वाद में, उत्तरदाता-डिक्रीधारकों द्वारा डिक्रियों के अधीन शेष राशि जमा करने हेतु समय के विस्तार की माँग करते हुए विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया है। उच्च न्यायालय में जो आवेदन दाखिल किए गए हैं, उन्हें निष्पादन न्यायालय को इस निदेश के साथ प्रेषित कर दिया गया है कि वह निरस्त किए जा चुके निष्पादन आवेदनों को पुनर्स्थापित करके उनका विधि के अनुसार निष्पादन करे।

उत्तरदाता-डिक्रीधारकों के विद्वान अधिवक्ता श्री के.के. मणि द्वारा यह निवेदन किया गया कि इस न्यायालय को उच्च न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए क्योंकि विषय केवल निष्पादन न्यायालय को इस आशय से प्रतिप्रेषित किया गया है कि वह डिक्री के उपबंधों के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि जमा करने हेतु समय के विस्तार के आवेदनों का विधि के अनुसार निष्पादन करे। इस न्यायालय के *सरदार मोहन सिंह* के वाद [1997] 9 एस.सी.सी. 217 में निर्णय पर निर्भरता रखी गई। उस निर्णय में प्रतिपादित विधि-प्रस्ताव के संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता, जिसमें यह कहा गया है :—

"धारा 28 की उपधारा (1) की भाषा से यह देखा जा सकता है कि विशिष्ट निष्पादन की डिक्री प्रदान किए जाने के पश्चात न्यायालय अपनी अधिकारिता नहीं खोता है और न ही वह कार्य-संपन्न प्राधिकारी बन जाता है। यह तथ्य कि स्वयं धारा 28 डिक्री के विखंडन का आदेश प्रदान करने की शक्ति देती है, यह इंगित करेगा कि जब तक डिक्री के निष्पादन में विक्रय विलेख निष्पादित नहीं हो जाता, तब तक विचारण न्यायालय विशिष्ट निष्पादन की डिक्री से व्यवहार

करने की अपनी शक्ति तथा अधिकारिता बनाए रखता है। यह भी स्पष्ट होगा कि न्यायालय को निर्णयऋणी के पक्ष में राशि का भुगतान करने अथवा विशिष्ट निष्पादन की डिक्री में उल्लिखित शर्तों का पालन करने के लिए समय का विस्तार करने की शक्ति प्राप्त है, यद्यपि निर्णयऋणी द्वारा डिक्री के विखंडन हेतु आवेदन दाखिल किया गया हो और उसे निरस्त कर दिया गया हो। अन्य शब्दों में, न्यायालय को विशिष्ट निष्पादन की डिक्री में उल्लिखित सशर्त डिक्री के अनुपालन हेतु समय का विस्तार करने का विवेकाधिकार प्राप्त है।"

पुनः, अपने समक्ष वाद के तथ्यों पर लागू अधिनियम की धारा 28 के उपबंधों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने *के. कल्पना सरस्वती बनाम पी.एस.एस. सोमसुंदरम चेट्टियार*, ए.आई.आर. (1980) एस.सी. 512 में कहा :—

"विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद के नियंत्रण में स्थित न्यायालय के लिए निक्षेप की अवधि का विस्तार करना पूर्णतः खुला है और इस न्यायालय द्वारा ऐसा अब भी किया जा सकता है ताकि वादी को उसके पक्ष में किए गए विक्रय करार का लाभ प्राप्त हो सके। प्रतिवादी-उत्तरदाता द्वारा जिन निरर्हकारी परिस्थितियों पर निर्भरता रखी गई है, वे उसके द्वारा वाद के दौरान ग्रहण किए गए मिथ्या अभिवाकों द्वारा संतुलित हो जाती हैं, जिन्हें युक्तियुक्त रूप से अस्वीकार कर दिया गया है। न ही हम इस बात से सहमत हैं कि प्रतिफल तथा समय-विस्तार हेतु आवेदन को, जो वस्तुतः निक्षेप हेतु अधिक समय की याचिका है, उस रूप में नहीं पढ़ा जा सकता। तथापि, विशिष्ट निष्पादन एक साम्यिक अनुतोष है और जो साम्या चाहता है, उस पर यह सुनिश्चित करने के लिए शर्तें अधिरोपित की जा सकती हैं कि अनुतोष प्रदान करते समय भी विपक्षी पक्षकार के साथ साम्या की जाए। विधि का अंतिम लक्ष्य न्याय है और इसलिए उसे प्राप्त करने के साधन भी

साम्या से अनुप्राणित होने चाहिए। यही कारण है कि जो साम्या चाहता है, उसे साम्या करनी होगी।"

के.एस. विघनादम तथा अन्य बनाम वैरावन, [1997] 3 एस.सी.सी. 1 में इस न्यायालय ने अचल संपत्ति के विक्रय के लिए करार के विशिष्ट निष्पादन की डिक्री प्रदान करने हेतु न्यायालय की विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते समय विचार किए जाने योग्य परिस्थितियों का उल्लेख किया। न्यायालय का यह दृष्टिकोण था कि इस तथ्य के बावजूद कि वाद परिसीमा अधिनियम, 1963 के अनुच्छेद 54 में विहित परिसीमा-अवधि के भीतर दाखिल किया गया था, न्यायालय फिर भी यह देख सकता है कि जहाँ समय संविदा का सारतत्त्व नहीं भी है, वहाँ भी वादी को संविदा के अपने भाग का पालन युक्तियुक्त समय के भीतर करना चाहिए और यह सभी प्रासंगिक परिस्थितियों, जिनमें संविदा के स्पष्ट उपबंध तथा संपत्ति की प्रकृति भी सम्मिलित हैं, को देखकर निर्धारित किया जाएगा। उच्चतम न्यायालय के समक्ष वाद प्रतिवादी-विक्रेताओं द्वारा अधिमान्य अपील थी, जिनके विरुद्ध तमिलनाडु राज्य के मदुरै में स्थित उनकी अचल संपत्ति के विक्रय के करार के विशिष्ट निष्पादन की डिक्री पारित की गई थी। न्यायालय ने अभिलक्षित किया कि भारत में नगरीय संपत्तियों के संबंध में यह सर्वविदित है कि गत कुछ दशकों के दौरान उनके मूल्यों में तीव्र वृद्धि हुई है। तत्पश्चात न्यायालय ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया :—

"हमारे समक्ष वाद में केवल विलंब का प्रश्न नहीं है। यह वादी की ओर से 2 1/2 वर्ष तक पूर्ण निष्क्रियता का वाद है, जो करार के उन उपबंधों का स्पष्ट उल्लंघन है, जिनके अनुसार उसे शेष राशि का भुगतान करना था, स्टाम्प पत्र क्रय करने थे और तत्पश्चात छह माह के भीतर विक्रय विलेख के निष्पादन की माँग करनी थी। इसके अतिरिक्त, यह विलंब मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि के साथ संयुक्त है— प्रतिवादियों के अनुसार, करार की तिथि तथा वाद सूचना की तिथि के मध्य तीन

गुना वृद्धि हुई। इस विलंब ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है जिसमें वादी को विशिष्ट निष्पादन का अनुतोष प्रदान करना साम्या-संगत नहीं होगा।"

न्यायालय ने संविधान पीठ के चंद रानी बनाम कमल रानी [1993] 1 एस.सी.सी. 519 में निर्णय का अवलंबन किया।

एन.पी. थिरुग्नानम (मृत) विधिक प्रतिनिधियों द्वारा बनाम डॉ. आर. जगन मोहन राव तथा अन्य, [1995] 5 एस.सी.सी. 115 में इस न्यायालय ने अधिनियम की धारा 16(सी) तथा धारा 20 के संदर्भ में यह अभिलक्षित किया कि वादी की ओर से निरंतर तत्परता तथा इच्छा, विशिष्ट निष्पादन के अनुतोष को प्रदान किए जाने के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त है तथा यह परिस्थिति सारवान तथा प्रासंगिक है और अनुतोष प्रदान करते समय अथवा अनुतोष प्रदान करने से इंकार करते समय न्यायालय द्वारा इस पर विचार किया जाना अपेक्षित है। यदि वादी इसका अभिकथन करने अथवा इसे सिद्ध करने में विफल रहता है, तो उसे असफल होना ही होगा। यह न्यायनिर्णीत करने के लिए कि क्या वादी संविदा के अपने भाग का पालन करने के लिए तत्पर तथा इच्छुक है, न्यायालय को अन्य आनुषंगिक परिस्थितियों के साथ-साथ वाद दाखिल किए जाने से पूर्व तथा उसके पश्चात वादी के आचरण को भी विचार में लेना होगा। न्यायालय केवल इस कारण अनुतोष प्रदान करने के लिए आबद्ध नहीं है कि विक्रय का एक वैध करार विद्यमान था। यह एक साम्यिक अनुतोष है तथा न्यायालय के विवेकाधिकार में है, किन्तु इस विवेकाधिकार का प्रयोग विधि के स्थापित सिद्धांतों के अनुसार किया जाना है, न कि मनमाने ढंग से।

रामनकुट्टी गुप्तन बनाम अवरा, [1994] 2 एस.सी.सी. 642 में अपीलकर्ता अचल संपत्ति के विक्रय के लिए करार के विशिष्ट निष्पादन संबंधी वाद में निर्णयऋणी था। न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या अधिनियम की धारा 28 के अधीन आवेदन उसी

वाद में अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित डिक्री के निष्पादन पक्ष में पोषणीय था। वादी-उत्तरदाता का विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद, यद्यपि विचारण न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया था, तथापि अपीलीय न्यायालय द्वारा डिक्री किया गया, जिसने प्रतिफल की शेष राशि जमा करने के लिए एक माह का समय प्रदान किया। निर्णयऋणी ने डिक्री के विरुद्ध उच्च न्यायालय में द्वितीय अपील दाखिल की, जिसे निरस्त कर दिया गया। डिक्रीधारक ने अपीलीय न्यायालय द्वारा निर्धारित समय की समाप्ति के पश्चात, किन्तु द्वितीय अपील के निरस्त किए जाने से पूर्व राशि जमा कर दी। डिक्रीधारक ने डिक्री के निष्पादन हेतु आवेदन किया। निर्णयऋणी ने इन्हीं कार्यवाहियों में अधिनियम की धारा 28 के अधीन संविदा के विखंडन हेतु आवेदन दाखिल किया, जिसके परिणामस्वरूप डिक्री पारित हुई थी, इस आधार पर कि विचारण न्यायालय की डिक्री के एक माह के भीतर प्रतिफल की शेष राशि जमा नहीं की गई थी। निष्पादन न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि राशि समय के भीतर जमा कर दी गई थी, आवेदन को इस आधार पर निरस्त कर दिया कि वह निष्पादन पक्ष में पोषणीय नहीं था। उच्च न्यायालय ने भी पुनरीक्षण में यह अभिनिर्धारित किया कि आवेदन निष्पादन न्यायालय में पोषणीय नहीं था। इससे निर्णयऋणी इस न्यायालय के समक्ष आया। इस न्यायालय ने अभिलक्षित किया कि जब डिक्री, डिक्री की शर्तों के पालन के लिए समय विनिर्दिष्ट करती है, तब राशि जमा करने में विफलता की स्थिति में, धारा 28(1) स्वयं न्यायालय को ऐसी शर्तों पर, जिन्हें न्यायालय अनुज्ञात करे, क्रय धनराशि अथवा अन्य राशि, जिसका भुगतान करने का न्यायालय ने आदेश दिया है, के भुगतान हेतु समय का विस्तार करने की शक्ति प्रदान करती है। न्यायालय ने, बंबई उच्च न्यायालय तथा आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के निर्णयों में विद्यमान विरोध को अभिलक्षित करने के पश्चात, यह अभिनिर्धारित किया कि जब डिक्री पारित करने वाला न्यायालय तथा निष्पादन न्यायालय एक ही हो, तब धारा 28 के अधीन आवेदन निष्पादन न्यायालय में दाखिल किया जा सकता है। तथापि, जहाँ निष्पादन हेतु डिक्री किसी अंतरिती निष्पादन न्यायालय को अंतरित कर दी जाती है,

वहाँ निश्चय ही अंतरिती न्यायालय मूल न्यायालय नहीं होता है तथा निष्पादन न्यायालय अधिनियम की धारा 28 के अर्थ में "वही न्यायालय" नहीं होता है। किन्तु जब आवेदन उस न्यायालय में किया गया हो जिसमें मूल वाद दाखिल किया गया था और निष्पादन कार्यवाही चल रही हो, तब निश्चय ही धारा 28 के अधीन आवेदन उसी न्यायालय में पोषणीय है। तत्पश्चात, निर्णयऋणी के इस तर्क पर विचार करते हुए कि अपीलीय न्यायालय द्वारा अनुज्ञात समय के भीतर राशि जमा नहीं की गई थी, न्यायालय ने कहा :—

> "तत्पश्चात प्रश्न यह है कि क्या यह हमारे हस्तक्षेप के लिए उपयुक्त वाद है। यह देखा जाता है कि विशिष्ट निष्पादन की डिक्री अंतिम हो गई थी। जबकि द्वितीय अपील लंबित थी, प्रतिफल की शेष राशि जमा कर दी गई थी और उच्च न्यायालय के संज्ञान में यह लाने के लिए कोई कदम नहीं उठाया गया था कि उत्तरदाता ने अपीलीय डिक्री के अनुपालन में विनिर्दिष्ट समय के भीतर प्रतिफल की शेष राशि जमा न करके व्यतिक्रम किया था। इसके अतिरिक्त, उत्तरदाता दीर्घकाल से भूमि के कब्जे में रहा है। निष्पादन मध्यावस्था में है। इन परिस्थितियों में, संविधान के अनुच्छेद 136 का आदेश यह है कि पर्दा गिरा दिया जाए और आवेदन को वहीं शांतावस्था में रहने दिया जाए जहाँ उसे रखा गया था तथा अपील को निरस्त कर दिया जाए।"

रामनकुट्टी गुप्तन के वाद (उपर्युक्त) में इस न्यायालय के निर्णय के दृष्टिगत, जब विचारण न्यायालय तथा निष्पादन न्यायालय एक ही हों, तब निष्पादन न्यायालय समय के विस्तार हेतु आवेदन का विचार कर सकता है, यद्यपि आवेदन को मुख्य वाद में दाखिल आवेदन के रूप में माना जाना है। इसी तर्क के आधार पर, विक्रेता-निर्णयऋणी भी विक्रय संविदा के विखंडन की माँग कर सकता है अथवा डिक्री के निष्पादन को वर्जित करने हेतु प्रतिरक्षा में यह अभिवाक् ग्रहण कर सकता है। जिन आधारों पर विचारण न्यायालय ने निष्पादन आवेदन को निरस्त किया था, उनमें से एक यह था कि डिक्रीधारक ने विक्रय करार

के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि का भुगतान नहीं किया था तथा न्यायालय द्वारा डिक्री में विनिर्दिष्ट समय के भीतर भी भुगतान नहीं किया था। जब समय के विस्तार हेतु आवेदन उसके समक्ष दाखिल किए गए थे, तब उच्च न्यायालय निश्चित रूप से इस प्रश्न पर विचार कर सकता था। तथापि, निर्णयऋणी की आपत्ति पर उसने इन आवेदनों पर निर्णय के लिए विषय को निष्पादन न्यायालय को वापस प्रेषित करना चुना, जो संभवतः परिस्थितियों में अपनाई जाने वाली सही प्रक्रिया नहीं थी। किन्तु साथ ही, उच्च न्यायालय ने यह अभिलक्षित करके निष्पादन न्यायालय के विवेकाधिकार पर बंधन अधिरोपित कर दिए कि विक्रेता-निर्णयऋणी द्वारा विशिष्ट निष्पादन की डिक्री के विरुद्ध दाखिल अपील के निस्तारित हो जाने के पश्चात भी वे विक्रय विलेख के निष्पादन की माँग करते समय राशि जमा कर सकते हैं।

विक्रय करार 16 फरवरी, 1980 को, अर्थात् लगभग 19 वर्ष पूर्व, निष्पादित किया गया था। इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं है कि न्यायालय द्वारा प्रदान की गई अवधि के भीतर प्रतिफल की शेष राशि क्यों जमा नहीं की जा सकी तथा इस अवधि के विस्तार की माँग करते हुए अधिनियम की धारा 28 के अधीन कोई आवेदन क्यों नहीं किया गया। परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 54 के अधीन, करार की तिथि से अथवा जब वाद हेतु कारण-कार्य उत्पन्न होता है, उस तिथि से विक्रय संविदा के विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दाखिल करने के लिए 3 वर्ष की अवधि विहित है। केवल इस कारण कि कोई वाद परिसीमा की विहित अवधि के भीतर दाखिल किया गया है, इससे क्रेता-वादी इस बात का प्रदर्शन करने से विमुक्त नहीं हो जाता कि क्या वह करार के अपने भाग का पालन करने के लिए तत्पर तथा इच्छुक था और यदि पालन नहीं हुआ था, तो क्या वह विक्रेता द्वारा उत्पन्न किसी बाधा के कारण था अथवा अन्यथा। किसी करार के विशिष्ट निष्पादन को प्रदान करने संबंधी उपबंध अत्यंत कठोर हैं। साम्यिक विचारणाएँ लागू होती हैं। न्यायालय को सभी आनुषंगिक परिस्थितियों पर विचार करना होता है, जिसमें यह भी सम्मिलित है कि क्या क्रेता ने विक्रय संविदा के अधीन स्वयं को युक्तियुक्त रीति से संचालित किया है। जब विशिष्ट

निष्पादन हेतु वाद दाखिल किए जाने के संबंध में विधि की यह स्थिति है, तब क्या न्यायालय विचारण न्यायालय द्वारा डिक्री पारित किए जाने के 5 वर्ष पश्चात तथा अपीलीय न्यायालय द्वारा उसकी पुष्टि किए जाने के 3 वर्ष पश्चात, डिक्री के उपबंधों के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि के भुगतान हेतु समय का विस्तार नियमित रूप से प्रदान कर सकता है? यह उत्तरदाता-डिक्रीधारक का वाद नहीं है कि विक्रेता-निर्णयऋणी की ओर से किसी त्रुटि के कारण डिक्री के अनुसार राशि जमा नहीं की जा सकी। स्थिति ऐसी होने पर, यदि अब समय प्रदान किया जाता है, तो वह करार के विशिष्ट निष्पादन हेतु वाद दाखिल किए जाने के लिए विहित परिसीमा-अवधि से परे चला जाएगा, यद्यपि यह उपबंध कठोर रूप से लागू नहीं भी हो सकता है। तथापि, यह न्यायालय द्वारा विचार किए जाने योग्य एक महत्वपूर्ण परिस्थिति है। इसके अतिरिक्त, डिक्रीधारक-उत्तरदाताओं की ओर से इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि उन्होंने डिक्री के अनुसार प्रतिफल की शेष राशि का भुगतान क्यों नहीं किया, सिवाय इसके कि स्वयं उच्च न्यायालय ने जो टिप्पणी करना उपयुक्त समझा, जो निश्चित रूप से अभिलेख से समर्थित नहीं है। साम्या की अपेक्षा है कि विवेकाधिकार का प्रयोग डिक्रीधारक-उत्तरदाताओं के पक्ष में न किया जाए तथा डिक्री का अनुपालन करने हेतु उन्हें समय का कोई विस्तार प्रदान न किया जाए।

अतः, ये अपीलें व्ययों के सहित अनुज्ञात की जाती हैं। उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया जाता है तथा निष्पादन न्यायालय के निर्णय की पुष्टि की जाती है।

वी.एम. अपीलें अनुज्ञात की गईं।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता। समस्त व्यावहारिक, कार्यालयीय, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।